सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

प्रथम श्रेष्ठ प्रथा : गुरूकुल पद्धति

द्वितीय श्रेष्ठ प्रथा : शास्त्रार्थ

प्रथम श्रेष्ठ प्रथा : गुरूकुल पद्धति

भारतीय संस्कृति, भारतीय ज्ञान परम्परा एवं भारतीयता का पर्याय तथा सनातन परम्परा का संवर्धन, संरक्षण करने वाले भारत की सांस्कृतिक राजधानी काशी/ वाराणसी में देदीप्यमान विश्वविश्रुत सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी भारतीय वाङ्गमय के विभिन्न शास्त्रीय शाखाओं के अध्ययन, अध्यापन के साथ प्राचीन शिक्षण पद्धति, मूल्यांकन पद्धति, मूल्य संरक्षण, चरित्र निर्माण आदि के क्रियान्वयन सम्बन्धी सर्वोत्कृष्ट परिपाटियों के निर्वहन में निरन्तर संलग्न है।

यद्यपि इस विश्वविद्यालय में अनेकों उत्तम परिपाटीयाँ प्रवाहमान हैं तथापि उन परिपाटियों में अन्यतम परिपाटी गुरूकुल पद्धति है।

भारतीय सनातन परम्परा का मूल आधार वेद, शास्त्रादि हैं, जिनके अध्ययन, अध्यापन की विशेष पद्धति हमारे ऋषियों से लेकर अद्यावधि अविच्छिन्न रूप से विश्वविद्यालय में प्रवाहमान है। इसमें छात्रों को आत्म.अनुशासन, समाज सेवा, राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावना के साथ.साथ नैतिक, मानवीय, भावनात्मक व आध्यात्मिक मूल्यों को बढ़ावा देने के लिए गुरूकुल प्रणाली को अपनाया जाता है।

गुरूकुल जहाँ विद्यार्थी आश्रम में गुरू के सानिध्य में निवास करते हुए गुरू से केवल शास्त्रीय ज्ञानार्जन ही नहीं करते अपितु चारित्रिक, सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों का विकास भी करते हैं। गुरूकुल में अध्यापन कराने वाले आचार्य को उपाध्याय कहा जाता है तथा गुरूकुल के मुख्य आचार्य को कुलपति या महोपाध्याय पद से सुशोभित किया जाता था।

जहाँ बड़े–बड़े सम्मेलनों, सभाओं में प्रवचनों द्वारा ज्ञानार्जन होता था उसे तपस्थली कहा जाता था, जैसे नैमिषारण्य आदि। वाह्य विशेषज्ञों से गुरूकुल में शिक्षा की विशेष व्यवस्था की जाती थी जिसे परिषद् कहा जाता था।

इस प्रणाली के अन्तर्गत विशुद्ध शास्त्रीय पद्धति से ज्ञानार्जन किया जाता है जिसमें गुरू.शिष्य परम्परागत वेशभूषा में ज्ञानार्जन करते हैं। गुरूमुखोच्चारणानुच्चारणानुकुलव्यापार (मौखिक रूप से) के माध्यम से ज्ञान राशि का संचरण, संरक्षण एवं संवर्द्धन होता है।

गुरूकुल पद्धति से अध्ययनरत छात्र

गुरूकुल पद्धति से अध्ययनरत विदेशी छात्र

द्वितीय श्रेष्ठ प्रथा : शास्त्रार्थ

अनादि काल से आत्मा, जगत या उसके नियन्ता इत्यादि विषय मनुष्य के जिज्ञाष्य विषय रहे हैं। इनके विषय में चिन्तन की अनेकों धारायें हमारे वेद, उपनिषद, पुराण आदि में विस्तृत दरीदृश्यमान हैं। उन चिन्तनों के मूल्यांकन की एक विशेष विधि है जिसमें चिन्तक चिन्तित विषयों को सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत करता है तथा परिषदवृन्द उन चिन्तित विषयों का वाद, जल्प अथवा वितण्डा के रूप में समालोचनात्मक पद्धति से विचार करता है, जिसे **शास्त्रार्थ** कहते हैं। शास्त्रार्थ में एकवादी एंक प्रतिवादी तथा एकाधिक निर्णायक होते हैं। इसमें कुछ विशेष नियम होते हैं जिनके भंग होने पर वादी या प्रतिवादी पराजित माना जाता है उसे निग्रहस्थान कहते हैं, ये 22 प्रकार के होते हैं। इस पद्धति से विद्यार्थियों में विषय चिन्तन में सूक्ष्मता, अमूर्त चिन्तन करने की प्रक्रिया में परिपक्वता का उद्बलन होता है। जब चिन्तक प्रातिस्विक रूप से विषय प्रतिपादन करता है, तथा परिषद वृन्द चिन्तित विषय का आलोचन कर प्राश्निक के रूप में विषयों की आलोचना करते हैं, वह देश विशेष में **वाक्यार्थ** शब्द से व्यवहृत होता है। वस्तुतः यह शास्त्रार्थ का ही देशान्तरीय रूप है जिसे उत्तर भारत में शास्त्रार्थ कहते हैं, उसी मूल्यांकन विधा को वाक्यार्थ कहा जाता है। मूल्यांकन की एक विशेष विधि यह है कि चिन्तक एक विशेष विषय का चिन्तन करता है और आठ परिषद विभिन्न रीतियों से चिन्तक के चिन्तन का परीक्षण करते हैं, जिसे **अष्टावधान** कहा जाता है। उदाहरार्थ चित्र।

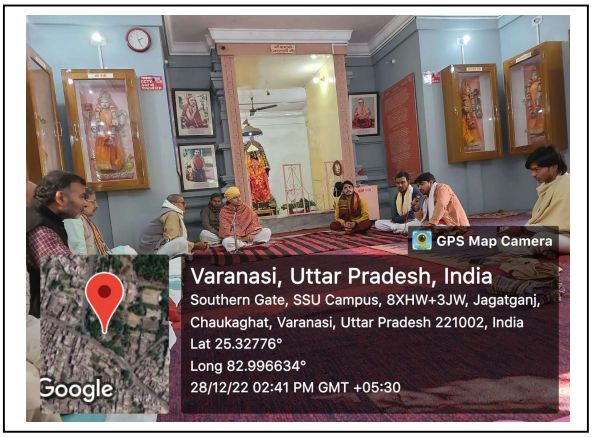

शास्त्रार्थ सभा

वाक्यार्थ सभा